4. येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- जिस अमर मन के द्वारा इस संसार में भूत, भविष्यत् और वर्तमानकाल के सब पदार्थ जाने जाते हैं, और जिसके द्वारा सात होता वाला (अग्निष्टोम) यज्ञ किया जाता है, वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला होवे।

5. यस्मिन्नृचः साम यजूँषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिँश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- रथ चक्र की नाभि में तीलियों की भाँति जिस मन में ऋचाएँ, साम और यजुः प्रतिष्ठित होते हैं, जिसमें प्राणियों का सर्वपदार्थविषयक ज्ञान निहित है, वह मेरा मन शुभसङ्कल्प वाला होवे।

6. सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

अर्थ- जैसे अच्छा सारथी घोड़ों को इधर-उधर प्रेरित करता है और अपने वश में रखता है, उसी प्रकार जो मन प्राणियों को बार-बार इधर-उधर प्रेरित करता है और अपने वश में रखता है, जो हृदय में स्थित है, जो जरा से रहित तथा अत्यन्त वेगवान् है, वह मेरा मन शुभ संङ्कल्प वाला होवे।

14. प्रजापति सूक्त

(शुक्लयजुर्वेद अध्याय-23, मन्त्र-1-5 तक)

ऋषि - प्रजापति, **देवता -** परमेश्वर।

1. हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

अर्थ- सृष्टि के आदिकाल में एक मात्र हिरण्यगर्भ पुरुष ही विद्यमान था। वह अकेला ही सर्व उत्पन्न मात्र भूतों का अधिपति या पालक था। उसी ने इस पृथिवी को धारण किया और इस द्युलोक को भी। उस प्रजापति को श्रद्धा भक्ति से परिचारित करें।

2. उपयामगृहीतोसि प्रजापतये त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिः सूर्यस्ते महिमा।
यस्तेऽहन्संवत्सरे महिमा संबभूव यस्ते वायावन्तरिक्षे महिमा संबभूव यस्ते।
दिवि सूर्ये महिमा संबभूव तस्मै ते महिम्ने प्रजापतये स्वाहा देवेभ्यः॥

अर्थ- (महिम ग्रह को ग्रहण करना।) हे ग्रह! तुम उपयाम पात्र के द्वारा ग्रहण किये गये हो। प्रजापति के लिए प्रिय तुम्हें मैं ग्रहण करता हूँ। (ग्रह को वेदि पर धरना।) यह तुम्हारा स्थान है। हे ग्रह! यह सूर्य तुम्हारी महिमा है। तुम्हारी जो महिमा दिन में, संवत्सर में उत्पन्न हुई, तुम्हारी जो महिमा वायु में, अन्तरिक्ष में उत्पन्न हुई तथा तुम्हारी जो महिमा द्युलोक में, सूर्य में उत्पन्न हुई- उस तुम्हारी महिमा के लिए, प्रजापति और अन्य देवों के लिए यह आहुति है।

3. यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

अर्थ- जो प्रजापति अपनी महिमा के कारण जगत् के सम्पूर्ण प्राणननिमेषोन्मेष करने वालों का स्वामी हुआ और जो इस समस्त द्विपाद-चतुष्पाद ऐश्वर्य का स्वामी है, उसी प्रजापति देव के लिए हम अपने धन-धान्यादि से सदा यज्ञादि करते रहें।

4. उपयामगृहीतोऽसि प्रजापतये त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिश्चन्द्रमास्ते महिमा यस्ते रात्रौ संवत्सरे महिमा संबभूव यस्ते पृथिव्यामग्नौ महिमा संबभूव यस्ते नक्षत्रेषु चन्द्रमसि महिमा संबभूव तस्मै ते महिम्ने प्रजापतये देवेभ्यः स्वाहा।।

अर्थ- हे पात्र! तुम उपयाम पात्र के द्वारा ग्रहण किये गये हो। प्रजापति के लिए प्रिय तुम्हें मैं ग्रहण करता हूँ। (ग्रह को वेदि पर धरना।) हे ग्रह! यह तुम्हारा स्थान है। हे ग्रह! यह चन्द्रमा तुम्हारी महिमा है। तुम्हारी जो महिमा रात्रि-संवत्सर में उत्पन्न हुई, तुम्हारी जो महिमा पृथ्वी-अग्नि में उत्पन्न हुई और तुम्हारी जो महिमा नक्षत्रों-चन्द्रमा में उत्पन्न हुई है, उस तुम महिमावान् प्रजापति तथा अन्य देवों के लिए यह आहुति है।

5. युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परि तस्थुषः रोचन्ते रोचना दिवि।।

अर्थ- इस स्थिर जगत् के ऊपर रक्ताभ, स्व-कीली पर घूमने वाले तथा आकाशचारी सूर्य को ऋत्विज् अपनी स्तुतियों से स्वकार्यरत करते हैं। उसी की ज्योति से द्युलोक में यह रोचमानग्रह- नक्षत्र आदि प्रकाशित होते हैं।

अथर्ववेद

15. राष्ट्राभिवर्धन सूक्त

कुल मन्त्र-6, **ऋषि-** वशिष्ठ, **देवता -**ब्रह्मणस्पति, अभीवर्तमणि
छन्द-अनुष्टुप्

1. अभीवर्तेन मणिना येनेन्द्रो अभिवावृधे।
तेनास्मान् ब्रह्मणस्पतेभि राष्ट्राय वर्धय।।

अर्थ- हे ब्रह्मणस्पते! जिस समृद्धिदायक मणि से इन्द्र की वृद्धि हुई है, उसी मणि के द्वारा तू हमें देश के हित के निमित्त विस्तृत कर।

2. अभिऽवृत्य सपत्नानभि या नो अरातयः।
अभि पृतन्यन्तं तिष्ठाभि यो नो दुरस्यति।।

अर्थ- हे मणे! हमारे विरोधी हिंसक शत्रु सेनाओं को जो हमसे युद्ध करने की कामना करते हैं, जो हमसे द्वेष करते हैं, तू उन्हें घेरकर पराक्रमहीन कर।

3. अभि त्वा देवः सविताभि सोमो अवीवृधत्।
अभि त्वा विश्वा भूतान्यभीवर्तो यथाससि।।

अर्थ- हे मणे! सविता देवता ने तुझे समृद्ध और सोम ने तुझे विस्तृत किया है। सभी प्राणी